परमेश्वर और मनुष्य जाति का कष्ट

फ्रेंक पैक

बाइबल के परमेश्वर में विश्वास करने वालों के कारण हमारी सबसे बड़ी समस्या मानवीय कष्ट को समझना है। जिस परमेश्वर को बाइबल इतना भला और प्रेम करने वाला दिखाने के साथ-साथ इतना शक्तिशाली दिखाती है, वह संसार में अपने जीवों पर कष्ट कैसे आने दे सकता है? क्या परमेश्वर को सचमुच ही उनकी चिन्ता है? वह युद्ध का आतंक क्यों होने देता है? निर्दोष लोगों पर इतना कष्ट क्यों आता है? बीमारी से इतना कष्ट क्यों होता है? विकृत या मंदबुद्धि बच्चों का जन्म क्यों होता है? ये तथा ऐसे कई और प्रश्न हैं जो न केवल कलीसिया के बाहर के लोग ही बल्कि स्वयं मसीही लोग भी पूछते हैं। यह समस्या इतना भयानक रूप ले सकती है जिससे कई लोगों के विश्वास मनुष्य जाति के कष्ट की चट्टानों पर मलबे की परत की तरह जमे हैं। हो सकता है कि हमें इस समस्या का उपयुक्त समाधान न मिल पाए, परन्तु ऐसा भी हो सकता है कि इस अध्ययन से दूसरे लोगों के संघर्ष कुछ कम हो सकें और हम में से हर एक को और गहराई से मनुष्य जाति के कष्ट की समझ आ जाए।

दुख में न केवल शारीरिक पीड़ा, बल्कि हताशा, मानसिक तनाव, वियोग, और मानवीय हृदय की समस्याएं भी आती हैं। ये संघर्ष विध्वंसकारी तेज़ी से आ सकते हैं, या हमारी आत्माओं पर धीरे-धीरे काबू भी पा सकते हैं।

मसीही बनने से कष्ट की समस्या का समाधान करना आसान नहीं, बल्कि और कठिन हो जाता है। परमेश्वर में विश्वास न करने वाले को कष्ट और त्रासदी की समस्या की व्याख्या करने की आवश्यकता नहीं पड़ती है। यदि संसार का कोई अर्थ न होता, बल्कि यह केवल एक मुर्दा मशीन होती, तो इसे मानवीय जीवों की चिन्ता कैसे हो सकती थी? ऐसे संसार को यह ''चिन्ता'' नहीं होनी थी कि लोग कष्ट में हैं या नहीं, क्योंकि इसमें ''चिन्ता'' करने की क्षमता नहीं होनी थी। बिना अर्थ के संसार में, यह जानने की कोई आवश्यकता न होती कि निर्दोष लोगों पर कष्ट क्यों आता है। यह तथ्य कि कोई एक व्यक्तिगत परमेश्वर में विश्वास करता है, जो छुटकारा देने वाला है, अपने आपको देने वाला है, प्रेम करने वाला है, और मनुष्य से असीम लगाव रखता है, समस्या की गम्भीरता को बढ़ा देता है। परन्तु, नास्तिक व्यक्ति को परमेश्वर के अस्तित्व का इन्कार करके हर समस्या से छुटकारा नहीं मिल जाता।

हो सकता है कि उसे संसार में कष्ट या बुराई का हिसाब न देना पड़े, परन्तु उसे नि:स्वार्थ जीवन, भलाई तथा ऐसे लोगों के शौर्य का कारण बताने में इससे भी बड़ी समस्या आती है जो दूसरों के लिए जीते और मरते हैं। वह उन लोगों की निष्कपटता के बारे में कह सकता है जो इसी सोच में मरते हैं कि वे सही ही हैं? ये वे लोग हैं जिन्हें संसार अपने महानतम नायकों, मनुष्य जाति के सबसे अच्छे ऐतिहासिक उदाहरणों के रूप में सम्मान देता है। यदि मनुष्य के भलाई तथा शौर्य के गुण केवल अचानक इकट्ठे हुए अणुओं का परिणाम हैं, तो इसकी कोई व्याख्या नहीं दी जा सकती है और न ही संसार के अस्तित्व का कोई तर्क रह जाता है। इस कारण संसार में अर्थ के बारे में मनुष्य के सभी तर्क व्यर्थ हो जाते हैं। अविश्वासी व्यक्ति एक समस्या से तो छुटकारा पा लेता है, परन्तु उसके लिए उससे भी बड़ी और समस्या खड़ी हो जाती है!

कुछ गलत ''समाधान''

कष्ट की समस्या के लिए कौन से गलत ''समाधानों'' का सुझाव दिया जाता है?

''कष्ट भ्रम है''

फिलॉसफ़ी के आदर्शवादियों और मेरी बेकर एडी[1] द्वारा प्रचारित एक समाधान यह है कि हर प्रकार का कष्ट एक भ्रम है। इस विचार के अनुसार, कष्ट और दुख हमारे विकृत मनों की उपज हैं और मन से बाहर उनका अस्तित्व हो ही नहीं सकता। यदि बुराई का प्रत्येक अनुभव काल्पनिक है, तो यह निरीक्षक के मन में ही हो सकता है और एक यथार्थ वास्तविकता का भाग नहीं हो सकता। इस प्रकार भ्रमित सोच और कष्ट को एक ही माना जाता है। जितनी जल्दी कोई व्यक्ति अपने कष्ट के बारे में अपनी सोच को सुधार लेता है, उतनी ही जल्दी उसका कष्ट दूर हो जाता है।

यह कहना बेतुका है कि संसार में हर एक दुखांत केवल काल्पनिक ही है। यदि ऐसा हो सकता है, तो हमारा संसार ऐसा है जिसमें डरावनी समस्याओं की कल्पना करने वाले दिमाग रहते हैं और यह अपने आप में ही एक परेशान करने वाली बुराई बन जाता है। यदि बुराई वास्तव में है ही नहीं, तो दिमाग ऐसी बुराइयों की कल्पना ही क्यों करेगा? किसी दुर्घटना में जिसकी आंखें चली गई हैं, उसे यह कहना बेतुका है, ''तेरा अन्धापन वास्तविक नहीं है; यह तो केवल तू ऐसा सोचता है।'' उस मां और बाप को जिनका बेटा खो गया हो यह कहना बेतुका है, ''आपकी यह केवल कल्पना ही है कि आपका बेटा मर गया है। आपका कष्ट केवल एक भ्रम है; आपका बेटा मरा नहीं है।''

बाइबल में विश्वास करने वाले लोग जानते हैं कि कष्ट हमारे प्रभु यीशु मसीह के सिर में गढ़े कांटों और उसके शरीर में ठुकी कीलों की तरह ही वास्तविक है। हम भी पीड़ा के सम्बन्ध में इस झूठी धारणा को समर्थन करने के लिए कह सकते हैं कि चेलों का यह सोचना गलत था कि यीशु ने कष्ट सहे और वह क्रूस पर मरा था और यह कि सुसमाचार अपने आप में ही बुरी कल्पनाओं का परिणाम है। दोनों एक ही विचार का भाग हैं।

''परमेश्वर की सीमा है''

समस्या की इतनी गहराई से अगला प्रस्ताव उठता है कि सीमित परमेश्वर की धारणा में यह अपनी व्याख्या को ढूंढ़ने का यत्न करता है। विचार यह है कि परमेश्वर चाहे धर्म का भला और अच्छा समर्थक है, परन्तु अपनी इच्छा को पूरी तरह से पूरा करने में अपर्याप्त है। उसे उन दुष्ट शक्तियों के सामने जिनके विरुद्ध वह संसार में लड़ रहा है, सीमित कहा जाता है। ऐसा विचार रखने वाले लोगों का विचार है कि यह सृष्टि की नहीं बल्कि सृष्टिकर्त्ता की अयोग्यता है जो हमें भोगनी पड़ती है। उनकी फ़िलॉसफ़ी में यह बात है कि परमेश्वर की अनन्त इच्छा के सामने ऐसी रुकावटें आती हैं जो उसने अपनी इच्छा से नहीं बनाई हैं और ये रुकावटें उसे अपनी इच्छा को पूरा करने में बाधा डालती हैं। वे हमसे यह विश्वास करवाना चाहते हैं कि परमेश्वर अपनी पूरी शक्ति से बुराई का विरोध और संसार को अच्छा बनाने का यत्न कर रहा है, परन्तु उसकी सीमा है। उन्हें लगता है कि परमेश्वर को हमारी सहायता की आवश्यकता है क्योंकि सांसारिक संघर्षों के परिणामों का क्या पता कि किस के पक्ष में जाएं। उनके विचार से प्रत्येक व्यक्ति जो परमेश्वर की ओर से लड़ रहा है, वह उस संघर्ष में उसकी शक्ति को बढ़ा रहा है जिससे धर्मियों के लिए विजय सम्भव हो सके।

हम देख सकते हैं कि यह विचार संसार में व्याप्त बुराई का जवाब नहीं देता, बल्कि एक ऐसे परमेश्वर के संघर्ष की व्याख्या करने का यत्न करता है जो बाहरी शक्तियों के विरोध के कारण पूरी तरह से अपनी इच्छा को पूरा करने में असमर्थ हो। बोस्टन यूनिवर्सिटी के ई. एस. ब्राइटमैन के समर्थक बहुत से आधुनिक फ़िलॉसफ़र इस विचार का समर्थन करते हैं, परन्तु इससे कभी समस्या का समाधान नहीं निकला। सीमित परमेश्वर की धारणा बाइबल की इस शिक्षा का विरोध करती है कि परमेश्वर सर्वशक्तिमान है और अपने उद्देश्यों को संसार में पूरा करने में पूरी तरह समर्थ है, क्योंकि ''परमेश्वर से सब कुछ हो सकता है'' (मत्ती 19:26ख)।

''हर कष्ट का कारण पाप ही है''

मानवीय कष्ट की समस्या का तीसरा गलत ''समाधान'' यह विचार है कि कष्ट हमेशा व्यक्ति के अपने पाप के कारण ही आता है। इस विचार में एक सच्चाई यह है कि कष्ट पाप से आता है। आज संसार की अधिकतर पीड़ा उन लोगों की बुराई तथा स्वार्थ का परिणाम है जो युगों से दुष्टता पर तुले हुए हैं। जब हम गलत काम करके दुख उठाते हैं, तो हमें यह समझने में थोड़ा कष्ट होना चाहिए कि हमें दुख क्यों उठाना पड़ा। परन्तु इससे हर बात का खुलासा नहीं होता है। इसमें निर्दोष के कष्ट उठाने का कारण पता नहीं चलता। यह कहना सही नहीं है कि जैसे किसी व्यक्ति की समस्याएं उसकी किसी बड़ी गलती के दण्ड के लिए हों वैसे ही हर प्रकार का कष्ट पाप के कारण है।

अय्यूब के साथियों ने उस पर किसी गुप्त बुराई का आरोप लगाकर जिससे उस पर कष्ट आया था, गलती की। उन्होंने उसे राख में बैठे, बीमारी और पीड़ा से कराहते, उसकी पत्नी को उसके विरुद्ध होने, उसके परिवार के मर जाने, और उसकी सम्पत्ति के छिन जाने को

देखा था। उसके परिवार पर आपत्ति एकदम आ गई थी। ''अय्यूब, तूने अवश्य कोई घोर पाप किया होगा, वरना तुझे इतना कष्ट न उठाना पड़ता,'' उसके मित्र ने कहा। ''मन फिरा और अपना पाप मान ले, क्या पता परमेश्वर अपने चेहरे को फिर से तेरी ओर कर ले।'' अय्यूब की पुस्तक का अधिकतर भाग इन आरोपों के विरोध में है, जिसमें उसने अपने धर्मी होने की रक्षा की और अपने कष्ट की इस गलत धारणा को मानने से इन्कार किया था। ऐसे संघर्ष से उसकी समस्याओं के बारे में एक गम्भीर समझ मिलती है।

नये नियम में यीशु ने बताया कि पिलातुस ने जिन लोगों का लहू उनके बलिदानों में मिला दिया था वे किसी भी प्रकार देश में रहने वाले दूसरे लोगों से बुरे नहीं थे।

> क्या तुम समझते हो, कि ये गलीली, और सब गलीलियों से पापी थे कि उन पर ऐसी विपत्ति पड़ी? मैं तुम से कहता हूं, कि नहीं; परन्तु यदि तुम मन न फिराओगे तो तुम सब भी इसी रीति से नाश होगे। या क्या तुम समझते हो, कि वे अठारह जन जिन पर शीलोह का गुम्मट गिरा, और वे दब कर मर गए: यरूशलेम के और सब रहने वालों से अधिक अपराधी थे? मैं तुम से कहता हूं कि नहीं; परन्तु यदि तुम मन न फिराओ तो तुम भी सब इसी रीति से नाश होगे (लूका 13:2-5)।

सुस्पष्ट भाषा में, हमारे प्रभु ने इस विचार को नकार दिया कि कष्ट हमेशा इससे पीड़ित होने वालों की बुराई के कारण ही आते हैं।

एक और अवसर पर, जन्म के अन्धे को देखकर चेलों ने यीशु से पूछा था: ''हे रब्बी, किसने पाप किया था कि यह अन्धा जन्मा, इस मनुष्य ने, या उसके माता-पिता ने? यीशु ने उत्तर दिया, न तो इसने पाप किया था; न इसके माता पिता ने परन्तु यह इसलिए हुआ, कि परमेश्वर के काम उसमें प्रकट हों'' (यूहन्ना 9:2, 3)। वह व्यक्ति न तो अपने माता-पिता और न ही अपने पाप के कारण अन्धा पैदा हुआ था। मसीह का अपना कष्ट इस विचार को नकारने के लिए काफ़ी होना चाहिए कि सब प्रकार के कष्ट किसी के पापों के दण्ड स्वरूप मिलते हैं, क्योंकि पवित्र शास्त्र स्पष्ट सिखाता है कि उसने ''कोई पाप न किया'' (1 पतरस 2:22)। फिर भी, उस निर्दोष ने दोषियों के लिए कष्ट सहा ताकि वह हमें छुड़ा ले। पाप से कष्ट तो आ सकता है, परन्तु इससे यह पता नहीं चलता कि हर प्रकार का कष्ट कैसे आता है, न ही बाइबल इस बात को कष्ट के कारण स्वीकार करती है। मसीही लोगों को यह समझ होनी चाहिए।

अब जबकि हमने कुछ गलत ''समाधानों'' पर ध्यान दिया है, तो हमें यह मानना चाहिए कि मनुष्य जाति के कष्ट की समस्या के सम्पूर्ण समाधान तक पहुंचने का दावा कोई भी नहीं कर सकता है। इस प्रश्न के बहुत से पहलू हमारी सामर्थ व समझ से बाहर हैं। न ही हमारे लिए इस विषय को इस पाठ में समेट पाना सम्भव है। परन्तु, हो सकता है कि कष्टों पर सुझाए गए विचार उन कष्टों पर जो हम सहते हैं और जिन्हें हम दूसरों के जीवन में देखते हैं, हमारे मन को रोशन करें।

विश्वास और कष्ट को एक करने में संघर्षरत लोग इस समस्या को इस प्रकार व्यक्त करते हैं: ''यदि परमेश्वर भला है, वह मनुष्यों को प्रसन्न देखना चाहता है; और यदि वह सर्वशक्तिमान है, तो वह अपनी इच्छा के अनुसार जो चाहे कर सकता है। क्योंकि उसके बनाए हुए लोग अप्रसन्न हैं, इसलिए अवश्य ही परमेश्वर में सामर्थ, भलाई या दोनों की कमी है।''

परमेश्वर की सर्वशक्तिशालिता और भलाई

परमेश्वर की सर्वशक्तिशालिता और मनुष्य के लिए उसके महान प्रेम के नये मूल्यांकन से हमारे मनों में पाई जाने वाली कई भ्रांतियां दूर हो सकती हैं। ''परमेश्वर से सब कुछ हो सकता है'' (मत्ती 19:26) कहकर बाइबल क्या समझाना चाहती है? क्या इसका अर्थ यह है कि परमेश्वर वह गांठ बांध सकता है जिसे वह स्वयं खोल नहीं सकता? क्या परमेश्वर एक वर्गाकार घेरा बना सकता है? ऐसे प्रश्न पूछकर मनुष्य स्वयं शब्दों से खेल रहे हैं। यह तथ्य कि हम शब्दों को इस प्रकार इकट्ठे कर सकते हैं, का यह अर्थ नहीं है कि उनका कुछ भी अर्थ निकाल लिया जाए। दो पारस्परिक वशिष्ठ बातें नहीं की जा सकतीं, वरना परमेश्वर का संसार एक विसंगति बन जाएगा। सर्वशक्तिशालिता का अर्थ यह नहीं है कि परमेश्वर किसी के मन में आने वाली मूर्खता कर सकता है। इसके विपरीत, इसे उसके स्वभाव के अन्य गुणों के सम्बन्ध में, पूरी तरह से उनके साथ मिलाकर समझना चाहिए। परमेश्वर सर्व-सामर्थी है जो अपने स्वभाव और अपनी इच्छा के अनुरूप सब कुछ कर सकता है। बाइबल ही कहती है कि कुछ काम ऐसे हैं जिन्हें परमेश्वर नहीं कर सकता क्योंकि वह परमेश्वर है। परमेश्वर झूठ नहीं बोल सकता (इब्रानियों 6:18), वह बुराई से किसी की परीक्षा नहीं ले सकता और न ही परीक्षा में पड़ सकता है (याकूब 1:13), और वह बुराई को देखकर चुप नहीं रह सकता (हबक्कूक 1:13)। ऐसा करके तो वह अपने ही स्वभाव का विरोध करेगा।

सर्वशक्तिशाली परमेश्वर ने मनुष्य को अपनी पसन्द चुनने की शक्ति देकर, अपने जीवन में निर्णय लेने की स्वतन्त्र इच्छा के साथ बनाया था। परमेश्वर ने मनुष्य को स्वतन्त्रता की इच्छा प्रदान कर अपनी ही इच्छा को सीमित किया है। परन्तु मनुष्य को संसार में अपनी मर्ज़ी का मालिक बनाकर परमेश्वर ने स्वेच्छा से अपने आपको सीमित करके अपने सर्वशक्तिशाली होने को किसी भी प्रकार ख़तरे में नहीं डाला है। इस सीमा में, जो परमेश्वर ने स्वयं ही अपने ऊपर लगाई है कोई बाहरी शक्ति शामिल नहीं है, बल्कि इसे उसके ही स्वभाव से लिया गया है।

यदि कोई कहे कि जब उसे यह पता था कि इससे मनुष्य गलत पसन्द को चुनकर कष्ट में पड़ेगा तो परमेश्वर ने मनुष्य को स्वतन्त्र इच्छा देकर क्यों बनाया, तो इसका केवल एक ही उत्तर हो सकता है: अपनी असीम बुद्धि और प्रेम के कारण परमेश्वर उसमें होने वाला जोखिम लेने को तैयार था ताकि वह हमारे साथ व्यक्तियों के रूप में व्यवहार कर सके और

हमें अपनी इच्छा से उसकी सेवा करने या उसे ठुकराने की स्वतन्त्रता दे सके। उसने यह जोखिम हमें नैतिक और आत्मिक रूप में अपने जैसा बनाने के लिए उठाया। परमेश्वर लोगों के साथ मानवीय जीवों के मनों और इच्छाओं के पास बिनती करते हुए उन्हें जबरदस्ती नहीं बल्कि समझाकर काम करता है। इसलिए, संसार में पाई जाने वाली बहुत सी बुराइयां उन लोगों की बुरी इच्छाओं के कारण आती हैं जिन्होंने परमेश्वर के मार्ग को ठुकरा दिया है। यदि इच्छा की स्वतन्त्रता का कोई अर्थ है तो फिर परमेश्वर भी किसी के जीवन में प्रवेश करके उसे उसकी इच्छा के विरुद्ध, उसके पीछे चलने को केवल इसलिए मजबूर नहीं कर सकता कि वह ऐसा चाहता है। निर्णय लेना प्रत्येक व्यक्ति के अपने हाथ में है। परमेश्वर की सर्वशक्तिशालिता की कोई भी अवधारणा जो मनुष्य की पसन्द की स्वतन्त्रता और उसके कामों और निर्णयों के लिए उसकी नैतिक ज़िम्मेदारी को खत्म करती हो, परमेश्वर के वचन की शिक्षा के अनुसार नहीं हो सकती।

हम परमेश्वर को प्रेम कहते हैं, इसलिए लोग अक्सर परमेश्वर को किसी प्रकार के सांता क्लॉज़ या दादा के रूप में चित्रित करते हैं। उनका मानना है कि उसकी मुख्य दिलचस्पी यह देखने में है कि उसके बनाए लोगों के पास वह सब होना चाहिए जिसकी वे इच्छा करते हैं और पृथ्वी पर उन्हें पूरी तरह से आनन्द करना चाहिए। प्रेम की यह कैसी विकृत धारणा है! जब जीवन के अनुभव इस स्वप्न को छिन्न-भिन्न कर देते हैं, तो बहुत से लोग कहते हैं, ''मैं ऐसे परमेश्वर पर विश्वास नहीं कर सकता जो मुझे वह सब कुछ नहीं देता जो मैं मांगता हूं [या जो मुझे लगता है कि मेरे लिए अच्छा है]।'' सावधानीपूर्वक अध्ययन करने के बाद, मसीही व्यक्ति इस बात से अवगत है कि अपने लोगों के लिए परमेश्वर के प्रेम का वर्णन करने के लिए बाइबल में इस्तेमाल किए गए संकेत और एकरूपताएं परमेश्वर पिता को कभी भी सदय दादा के रूप में नहीं दिखाते।

परमेश्वर को एक कुम्हार के रूप में दिखाया गया है जो मिट्टी के बर्तन बनाने में बड़ी सावधानी से और चौकस होकर काम करता है। वह एक भवन निर्माता की तरह है जो निपुणता से एक सुन्दर मन्दिर को खड़ा करने के लिए पत्थरों को आकार देता है और उन्हें चुन-चुन कर चिनता है ताकि वह उसकी एक सर्वोत्तम रचना बन जाए। वह एक चरवाहे की तरह है जो अपने झुण्ड की रक्षा करने और उसे ख़तरे से बचाने के लिए समर्पित है, एक पिता जो अपने बच्चों को जिनमें उनकी खुशी है, अनुशासित करता और सुझाव देता है। उस प्रेम के कारण हम पर कष्ट आता है क्योंकि उसकी पवित्र आंख हमारे अन्दर इतनी बुराई देखती है जो उसकी पवित्रता को भंग और उसका प्रतिरोध करती है। परमेश्वर को हमें और प्रिय व्यक्ति बनाने के लिए, अपने शुद्ध और पवित्र स्वभाव जैसा बनाने के लिए हमारे साथ मिलकर काम करना है। निर्बलता पर हमारी विजयों से वह प्रसन्न हो सकता है, परन्तु जब तक उसे हम में वह सब दिखाई देता है जो उतना अच्छा नहीं है जितना होना चाहिए तब तक वह हमसे संतुष्ट नहीं होता है। वह हमें अनुशासित करता है, सिखाता है और तैयार करता है ताकि हम अनन्तकाल का समय उसके साथ बिता सकें। उसके अनुशासन में रहे बिना परमेश्वर के प्रेम की कोई भी अवधारणा पूरी नहीं होती है। वह जो सम्भाल हमारी

करता है वह इस बात पर ज़ोर देती है कि वह हमसे कितना प्रेम करता है और उसे हमारी इतनी चिन्ता है कि वह चाहता है कि हम उसके प्रिय पुत्र, हमारे उद्धारकर्त्ता यीशु मसीह के जैसे बन जाएं।

संसार की प्रकृति

एक और सत्य जो परमेश्वर की योजना में कष्ट के महत्व को समझने में हमारी सहायता कर सकता है, स्वयं संसार की प्रकृति में है। प्राकृतिक संसार की अति सुस्पष्ट विशेषताओं में से एक इसकी एकरूपता है। विज्ञान अपने विभिन्न रूपों में प्राकृतिक संसार की निरन्तरता की अवधारणा पर बना है। एक समान व्यवहार करने की तत्व की प्रवृत्ति को प्राकृतिक ''नियम'' कहा जा सकता है। प्रकृति में इन ''नियमों'' के काम करने (या सिद्धांतों की एकरूपता) से लोग पृथ्वी पर वास करने, इसे अपने वश में करने और अपनी भलाई के लिए इसकी शक्तियों का इस्तेमाल करने के योग्य होते हैं। तत्व की वही एकरूपता जो भले लोगों को भले उद्देश्यों के लिए इसका इस्तेमाल करने का अवसर प्रदान करती है, वही दुष्ट लोगों को बुरे उद्देश्यों के लिए तत्व का इस्तेमाल करने के योग्य बनाती है। शिक्षा, संस्कृति और आराधना के लिए भवन बनाने के लिए इस्तेमाल होने वाला लोहा हथियार बनाने के लिए भी इस्तेमाल हो सकता है जिससे लोग युद्ध करते हैं, चाहे उसका उद्देश्य अधर्म के लिए ही हो।

उदाहरण के लिए, आग का यदि सही ढंग से इस्तेमाल किया जाए तो मनुष्य के लिए एक अद्‌भुत हथियार है। यह उसके घर को गर्म रखती है, उसका भोजन पकाती है और मशीनें व फैक्ट्रियां चलाने के लिए ऊर्जा उत्पन्न करती है। परन्तु, वही आग जो कुछ दूरी से मनुष्य के शरीर को गर्म रखती और आराम देती है, शरीर के अधिक निकट आने पर उसे बहुत हानि पहुंचा सकती है। जो आग भोजन बनाने के लिए लकड़ियों को जलाती है वही आग यदि इसे अन्य प्राकृतिक शक्तियों से नियन्त्रण में न रखा जाए तो उस गांव को जला भी सकती है जिसमें हम रहते हैं।

परमेश्वर द्वारा आग के स्वभाव को नियन्त्रित करने वाले प्राकृतिक नियमों को भंग करने पर, यदि कभी किसी व्यक्ति या उसकी सम्पत्ति को ख़तरा हो जाए तो क्या हो? यदि परमेश्वर किसी के हर निर्णय पर कि आग के गुण उसके उद्देश्यों के अनुकूल नहीं हैं, हर बार हस्तक्षेप करे तो? बार-बार हस्तक्षेप करने से किसी को पता नहीं चल पाता कि प्राकृतिक संसार किसी विशेष घटना में सामान्य व्यवहार करेगा या नहीं। कितनी अव्यवस्था पैदा हो सकती है। इस अव्यवस्था को सृष्टि की सभी प्राकृतिक शक्तियों से गुणा करें। यदि कोई प्राकृतिक नियम न होता, तो स्वेच्छा और नैतिक ज़िम्मेदारी न रहती; गलत कार्य होते ही नहीं। यह एक बहुत बड़ी आशीष है कि मनुष्य के मन में आने वाली प्रत्येक इच्छा को पूरा करने के लिए परमेश्वर अपने संसार के प्राकृतिक कार्य में हस्तक्षेप नहीं करता।

इसी प्रकार, परमेश्वर अपने लोगों को विश्वासी होने के प्रतिफल के रूप में कष्ट से बचाव करने की प्रतिज्ञा नहीं करता। आम तौर पर पूछा जाता है, ''दुष्ट लोग क्यों समृद्ध होते

हैं और धर्मी लोगों पर ही कष्ट क्यों आते हैं ?'' बहुत पहले भजन 73 को लिखने वाला भी इसी समस्या से जूझता था। नये नियम में, परमेश्वर ने अपने लोगों से यह प्रतिज्ञा नहीं की कि वह उन्हें मनुष्य पर आने वाली सामान्य बुराइयों से बचाने के लिए एक ''ईश्वरीय बाड़'' लगा देगा। परमेश्वर ने मसीही लोगों को कैंसर या किसी अन्य घातक बीमारी से सुरक्षित रखने की प्रतिज्ञा नहीं की है। मैं मसीही हूं तो इसका यह अर्थ नहीं है कि परमेश्वर मेरे प्रियजनों को मृत्यु से बचा लेगा। मसीही होने से मुझे सड़क पर दुर्घटना से सुरक्षित होने की गारन्टी भी नहीं मिलती है। यदि परमेश्वर ने अपने बच्चों से इस प्रकार की विशेष कृपा दृष्टि रखने की प्रतिज्ञा की होती, तो प्राकृतिक नियमों की कार्य प्रणाली में परमेश्वर के किसी बच्चे के ख़तरे में होने पर कभी भी विघ्न पड़ जाता। उसके प्रति प्रेम और उसके नाम को महिमा देने के लिए परमेश्वर की सेवा करने के बजाय, लोग अकाल, कष्ट और मृत्यु की बीमा योजना (अर्थात सांसारिक लाभ) के लिए उसकी सेवा करेंगे। धर्म मात्र अपने हित साधने का साधन ही बन जाएगा; शुद्ध मन और नि:स्वार्थ सेवा करने का अवसर नहीं रहेगा।

दूसरों के साथ जीवन

''क्योंकि हम में से न तो काई अपने लिए जीता है और न कोई अपने लिए मरता है'' (रोमियों 14:7)। इस कथन में कष्ट की समस्या में एक और अन्तरदृष्टि मिलती है। अधिकतर कष्ट इसलिए होता है क्योंकि लोग समूहों में मिलकर रहते हैं। इस कारण एक के साथ होने वाली घटना दूसरों के जीवन को भी प्रभावित करती है।

विचार करें कि भीड़ भरे राजमार्ग के साथ-साथ नशे में धुत कोई शराबी तीव्र गति से गाड़ी चलाए तो क्या होगा। बहुत से दूसरे लोग उस सड़क से जा रहे हैं जो नियमों का पालन और अपनी समझ का पूरा इस्तेमाल कर रहे हैं क्योंकि वे लोग नशे में नहीं हैं। वे सड़क के नियमों का पालन करते हुए अपनी साइड पर गाड़ी चला रहे हैं। परन्तु, यदि शराबी ड्राइवर गलत साइड में घुसकर सीधा एक कार के आगे आ जाए तो उस शराबी की आपराधिक लापरवाही से किसी परिवार के सदस्यों की मृत्यु हो सकती है या उन्हें चोटें आ सकती हैं।

लोगों के इतनी बड़ी संख्या में एक दूसरे के इतना निकट रहने के कारण किसी व्यक्ति की गलती से दूसरे लोग आसानी से प्रभावित हो सकते हैं। आप कह सकते हैं, ''दूसरों की गलतियों के परिणामों में मुझे क्यों घसीटा जा रहा है ? मैं उनकी गलतियों के लिए कष्ट क्यों उठाऊं ?'' मान लीजिए कि आप एक ऐसे निर्जन स्थान पर जा सकते हैं जहां किसी भी प्रकार से संसार की कोई बीमारी आपको प्रभावित न कर सके। इसके साथ ही आपको उन आशिषों और अवसरों से भी वंचित होना पड़ेगा जो दूसरों के योगदान से आपको मिलते हैं। हमारे सबसे अच्छे अनुभवों में दूसरों के साथ संगठन की बात है। जीवन की आवश्यक वस्तुओं के लिए भी हम दूसरों पर निर्भर रहते हैं। बिना परस्पर निजी सम्बन्धों के हमारे जीवन कितने दयनीय होंगे! हम इकट्ठे रहने में शामिल जोखिमों का इन्कार करके संघबद्ध जीवन की आशिषों और सुअवसरों को स्वीकार नहीं कर सकते।

चरित्र पर कष्ट का प्रभाव

कष्ट के अर्थ में एक और अन्तरदृष्टि इस तथ्य में है कि पीड़ा उपचार के लिए भी हो सकती है अर्थात, कष्ट उठाने वाले को यह और अच्छा व्यक्ति बना सकती है। पाप सारे कष्ट की व्याख्या नहीं है, परन्तु अधिकतर इसका कारण ही होता है।

मनुष्य ने अपने आपको यह सोचकर धोखा दिया है कि वह भला है और उसे किसी की आवश्यकता नहीं है; परन्तु उसे इस बात का अहसास नहीं है कि वह निर्धन, अभागा, नंगा और आत्मिक रूप से अंधा है। पवित्र परमेश्वर के सामने, जो अधर्म को सहन नहीं कर सकता, मनुष्य बुरा, हठी और घमण्ड से फूला हुआ है। एक विद्रोही बालक की तरह, परमेश्वर के सामने समर्पण करने और उसके उद्देश्यों के योग्य बनने के लिए पापी का ''टूटा'' मन लेकर आना जरूरी है। जब तक किसी का जीवन ठीक-ठाक चलता है, उसे अपनी गलती और पाप को छोड़ने का कोई कारण दिखाई नहीं देता; यह पाप का एक धोखा है। आम तौर पर जब तक कोई मुश्किल में नहीं पड़ता तब तक उसे अपने आप में अपने अपर्याप्त होने की बात समझ नहीं आती। केवल तब ही उसे अपने आत्मसंतोष से घबराहट होती है और अपनी वास्तविक आत्मिक स्थिति का पता चलता है। इस अर्थ में, तंगहाली उस व्यक्ति को जगाने का काम कर सकती है, जो ना समझी से पाप में जीवन व्यतीत कर रहा था, ताकि उसे अपने खोए होने और अपने लिए परमेश्वर की आवश्यकता का पता चल सके।

आप किसी ऐसे व्यक्ति को जानते होंगे जो तब तक परमेश्वर की ओर मुड़ने और उसकी इच्छा पूरी करने से इन्कार करता रहा जब तक उसने कोई कष्ट न सहा हो। बौद्धिक रूप से उसे बहुत पहले पता था कि उसे सुसमाचार को मान लेना चाहिए। कोई भी यह दावा नहीं करेगा कि दुख अपने आप में अच्छा है, परन्तु दुख के समय जो अच्छी बात है वह यह है कि इस दौरान कोई ऐसा अवसर मिल जाता है जिससे कि वह व्यक्ति परमेश्वर की इच्छा के प्रति अपने को समर्पण कर देता है। दुख व्यक्ति से यह मनवा सकता है कि उसके मार्ग कितने गलत हैं और छुटकारे के लिए उसे परमेश्वर के अनुग्रह की कितनी आवश्यकता है।

दुख में दुखी व्यक्ति के चरित्र और आत्मा को सुन्दर और भद्र बनाने की शक्ति है: ''और वर्तमान में हर प्रकार की ताड़ना आनन्द की नहीं, पर शोक ही की बात दिखाई पड़ती है, तौभी जो उसको सहते सहते पक्के हो गए हैं, पीछे उन्हें चैन के साथ धर्म का प्रतिफल मिलता है'' (इब्रानियों 12:11)। मुश्किलों से हमें परमेश्वर की शक्ति और सामर्थ में नये स्रोतों का पता चलता है। हो सकता है कि जीवन हमारे लिए बड़ा सुखद रहा हो। अपने महत्व की ही भावना से भरपूर, हम जब तक अपनी इच्छा के अनुसार चलते गए, जब तक हमें किसी दुखद अनुभव से यह पता न चला कि निराशा के कारण हम कितने निर्बल हैं। ऐसे अनुभव से सार्थक जीवन जीने की योग्यता आती है। कष्ट, विपत्ति, कलेश, या दुख न होता, तो हमें साहस रखने, धैर्य रखने, अपना इन्कार करने और दया करने की चुनौती न मिलती; क्योंकि चरित्र के ये गुण दुख के वातावरण में सबसे अधिक बढ़ते हैं। यदि आप कहें कि, ''क्यों?'' तो मैं इसके आगे उत्तर नहीं दे सकता। मैं केवल इतना ही कह सकता

हूं कि परमेश्वर ने संसार को ऐसे ही बनाया है, और वह बेहतर जानता है।

मसीह का उदाहरण

पाप से छुटकारे के लिए कष्ट आवश्यक था, क्योंकि बिना क्रूस के क्षमा हो ही नहीं सकती थी। मसीह ने शांतिपूर्ण ढंग से और बड़े साहस से बुराई पर विजय पाने की बात जानकर दीनता और लज्जा को सहने का बहुत ही शानदार उदाहरण दिया है! ''परमेश्वर ने मसीह में होकर अपने साथ संसार का मेल मिलाप कर लिया'' (2 कुरिन्थियों 5:19क)। परमेश्वर अपने प्रिय पुत्र अर्थात देहधारी हुए, परमेश्वर पुत्र के कष्ट के बिना, हमें नहीं कह सकता था कि, ''मैं तुम्हें क्षमा करता हूं।'' मृत्यु और बुराई की शक्तियों पर विजय पाकर और अन्त में छुड़ाए हुओं की विजय सुनिश्चित करके पुनरुत्थान में पुत्र ने कितनी बड़ी विजय पाई है! यह अहसास होने पर कि जिसे क्रूस पर चढ़ाया गया था वह वही है जिसने कहा था, ''जिस ने मुझे देखा है उस ने पिता को देखा है'' (यूहन्ना 14:9), हमें पता चलता है कि मनुष्य की आत्मा की पीड़ा या कष्ट उसके ज्ञान या समझ से कहीं अधिक हैं। पतरस प्रेरित ने मसीह के कष्ट में हमारे लिए यह संदेश पाया था:

> क्योंकि यदि तुम ने अपराध करके घूसे खाए और धीरज धरा, तो इसमें क्या बड़ाई की बात है? पर यदि भला काम करके दुख उठाते हो और धीरज धरते हो, तो यह परमेश्वर को भाता है। और तुम इसी के लिए बुलाए भी गए हो क्योंकि मसीह भी तुम्हारे लिए दुख उठाकर, तुम्हें एक आदर्श दे गया है, कि तुम भी उसके चिह्न पर चलो। न तो उसने पाप किया, और न उसके मुंह से छल की कोई बात निकली। वह गाली सुनकर गाली नहीं देता था, और दुख उठाकर किसी को भी धमकी नहीं देता था, पर अपने आपको सच्चे न्यायी के हाथ में सौंपता था (1 पतरस 2:20-23)।

यीशु के मार्ग पर चलकर कष्ट से बचने की उम्मीद नहीं की जा सकती है। परमेश्वर और उसके पुत्र ने मुझे मेरे पापों से छुड़ाने के लिए बहुत कष्ट सहा है। यदि क्रूस की लज्जा को परमेश्वर महिमा और विजय में बदल सकता है, तो वह कष्ट और विपत्ति के क्रूसों को महिमा और सुन्दरता के मुकुटों में बदलने में भी मेरी सहायता कर सकता है।

उत्तर का एक भाग स्वर्ग

मनुष्य के कष्ट के सम्बन्ध में एक अन्तिम बात कहनी आवश्यक है: शब्द है ''स्वर्ग।'' ''क्योंकि हमारा पल भर का हलका सा कलेश हमारे लिए बहुत ही महत्वपूर्ण और अनन्त महिमा उत्पन्न करता जाता है'' (2 कुरिन्थियों 4:17)। पृथ्वी पर मानवीय कष्ट की पूरी कहानी समझी नहीं जा सकती। कठिन परिश्रम और आंसुओं से भरे इस जीवन के बाद आनन्द का राज्य है। वहां हमारी आंखों से प्रत्येक आंसू पोंछ डाला जाएगा और हर कष्ट आनन्द में बदल जाएगा।

यीशु ने क्रूस का बोझ उठाया ताकि मुझे मेरा घर मिल जाए। प्रेरितों और शहीदों ने कारावास और सताव भोगे ताकि हमारे लिए अनन्त जीवन का शुभसमाचार सम्भाला रहे। जब मैं अपनी आंखें उस नगर की ओर लगाकर जिसका बनाने वाला और निर्माता परमेश्वर है, घर को जाता हूं तो मुझे मेरा बोझ हल्का होता लगता है। मैं इस जीवन की निराशाओं और संघर्षों के आगे देख सकता हूं और जानता हूं कि ''सबसे अच्छा तो अभी आने वाला है।''

पाद टिप्पणियां

[1]मेरी बेकर एड्डी (1821-1910) अमेरिका में ''मानसिक चंगाई'' की लहर का एक भाग थी और अन्ततः उसने क्रिश्चियन साइंटिज़्म की स्थापना की। अपने विचार उसने स्पिरिचुअल हीलिंग में प्रकाशित किए और 1908 में *क्रिश्चियन साइंस मोनिटर* समाचार पत्र स्थापित किया।

यह पाठ *अबिलेन क्रिश्चियन कॉलेज लैक्चर्ज़,* 1958 से लेकर मुद्रित किया गया है। अबिलेन क्रिश्चियन यूनिवर्सिटी लैक्चरशिप के निर्देशक की अनुमति से छापा गया।

मसीही लोगों की उदारता से ट्रुथ फ़ॉर टुडे वर्ल्ड मिशन स्कूल बिना कोई कीमत लिए ये पुस्तकें आपको उपलब्ध करवा सका है। अपनी mailing list को अपडेट करने के लिए हमें आपसे निम्न जानकारी चाहिए।

यह पुष्टि करने के लिए कि आपकी जानकारी अभी भी सही है, कृपया हमें साल में कम से कम एक बार अवश्य लिखें कि क्या आपको यह सामग्री लगातार सही पते पर मिल रही है और आपके लिए कैसे सहायक हो रही है। आपकी सेवकाई में परमेश्वर आपको आशीष दे।

एक पर टिक करें: ☐ पुरुष ☐ स्त्री

(नोट: सम्भव हो तो पता अंग्रेज़ी के बड़े अक्षरों में लिखें)

नाम: _____

पूरा पता: _____

_____

_____ PIN _____

पुराना पता (पता बदलने की स्थिति में): _____

_____

_____

_____ PIN _____

ई-मेल पता: _____

कलीसिया का नाम: _____

स्थान: _____

प्रचारक का नाम: _____

जिस मण्डली में आप आराधना करते हैं, वहां आपकी सेवा क्या है?

☐ प्रचारक ☐ सदस्य

☐ बाइबल क्लास टीचर ☐ सदस्यता नहीं

क्या आपको ट्रुथ फ़ॉर टुडे वर्ल्ड मिशन स्कूल का साहित्य लगातार मिल रहा है? (एक पर टिक करें):

☐ नहीं

☐ हां, डाक से

☐ हां, श्री _____ के पास से।

आप किस भाषा में पुस्तकें पाना चाहेंगे? (केवल एक ही टिक करें):

☐ हिन्दी ☐ तमिल ☐ तेलुगू ☐ अंग्रेज़ी

आप इस सामग्री का इस्तेमाल कैसे करते हैं/करेंगे? _____

_____

यदि आप ऐसे व्यक्तियों को जानते हों जो इस सामग्री को लगातार प्राप्त करना चाहते हैं, तो कृपया इस फार्म की कापी करवाकर उनके नाम से यह फार्म Truth for Today, P.O. Box 44, Chandigarh - 160017 के पते पर भेज दें।